योगकारक ग्रहों की दशा में समृद्धि

प्रत्येक जातक अपने जीवन में सुख–समृद्धि और वैभव की कामना करता है। ज्योतिषी के समक्ष अधिकतर जातक अपनी आर्थिक स्थिति से सम्बन्धित कोई न कोई प्रश्न लेकर आते हैं। ज्योतिष में कुंडली में समृद्धि के योग हों और संबंधित दशा भी आ जाए, तो जातक की मनोवांछित कामना पूर्ण होती है।

डॉ. सुशील अग्रवाल

कुंडली में कौन–कौन से ग्रह अपनी स्थिति एवं संबन्धों के आधार पर जातक को समृद्धि प्रदान करते हैं, यही इस लेख का विषय है।

1. योगकारक ग्रह

कुंडली में निम्न भावेशों के मध्य परस्पर सम्बन्ध होने पर ये ग्रह योगकारक फलप्रद हो जाते हैं और ऐसे ग्रह अपने भाव सम्बंधित सुख के अतिरिक्त अपने कारकत्व के फल भी देते हैं :

1. केन्द्र और त्रिकोण स्वामियों का परस्पर सम्बन्ध हो, परन्तु इसके अतिरिक्त किसी और से सम्बन्ध न हो तो विशेष शुभ फलदायक होता है। यदि कोई और सम्बन्ध हो, तो वह अशुभ भावेश से न हो। केन्द्र और त्रिकोण स्वामियों में से निम्न को विशेष शुभ माना गया है :

- नवमेश और दशमेश।
- लग्नेश और दशमेश।
- पंचमेश और दशमेश।

2. केन्द्र और त्रिकोण का स्वामी एक ही ग्रह हो तो योगकारक होता है। यदि अन्य किसी त्रिकोण स्वामी से संबंध भी हो जाए, तो अत्यन्त श्रेष्ठ योग होगा। मेष और वृश्चिक लग्न में किसी ग्रह के पास केन्द्र एवं त्रिकोण भाव का स्वामित्व नहीं होता। अन्य सभी लग्नों के लिए कोई न कोई ग्रह योगकारक होता है।

3. यदि नैसर्गिक अशुभ ग्रह राहु/केतु केन्द्र में स्थित होकर त्रिकोणेश से सम्बन्ध बनाएँ या त्रिकोण में स्थित होकर केन्द्रेश से सम्बन्ध बनाएँ, तो योगकारक फलप्रद होते हैं।

यहाँ 'सम्बन्ध' की संक्षिप्त व्याख्या करना उचित रहेगा। बृहत्पाराशरहोराशास्त्रम् के अनुसार केन्द्र और त्रिकोणेश के लिए निम्न सम्बन्ध मान्य हैं :

राशि–परिवर्तन सम्बन्ध : इस सम्बन्ध को स्थान परिवर्तन भी कहते हैं। जब दो भाव स्वामी परस्पर भावों में हों तो यह सम्बन्ध निर्मित होता है। जैसे– पंचमेश की स्थिति दशम भाव में हो और दशमेश की स्थिति पंचम भाव में हो।

युति सम्बन्ध : यह दूसरे प्रकार का सम्बन्ध है। इस सम्बन्ध में दो ग्रह एक ही भाव में स्थित होते हैं। जैसे– पंचमेश और दशमेश दोनों कुंडली के किसी भी भाव में इकट्ठे स्थित हों।

परस्पर दृष्टि सम्बन्ध : यह तृतीय प्रकार का सम्बन्ध है। दो ग्रहों को परस्पर सम्बन्धित कहा जाता है यदि वे एक दूसरे को पूर्ण दृष्टि से देखते हों।

एक–दूसरे के स्थान में : दोनों में से कोई भी दूसरे के स्थान में हो। जैसे– केन्द्रेश किसी त्रिकोण भाव में हो या त्रिकोणेश किसी केन्द्र भाव में हो।

किन्हीं स्थितियों में केन्द्रेश और त्रिकोणेश के मध्य निर्मित योग भंग भी हो जाता है। बृहत्पाराशरहोराशास्त्रम् के अनुसार, नवमेश–दशमेश का सर्वाधिक बली योग भंग हो जाता है यदि उनमें से कोई भी अष्टमेश या एकादशेश हो। ऐसी स्थिति में योगफल तब ही मिलते हैं, जब अन्य त्रिकोण स्वामी भी उनसे सम्बन्ध करें। इससे यह स्वतः ही सिद्ध हो जाता है कि यदि अन्य केन्द्रेश–त्रिकोणेश के मध्य निर्मित योगकारक फल भंग हो जाएंगे, यदि उनमें से कोई अष्टमेश या एकादशेश भी हो।

2. दशाफल : योगफलों के लिए यदि उपरोक्त योग निर्मित हो रहे हैं, तो फलों के घटने के लिए उपयुक्त दशा भी चाहिए। इस लेख में वर्णित दशाफल विंशोत्तरी दशा पद्धति पर आधारित है। इस पद्धति में महादशा मुख्य होती है जो अन्तर्दशा का सम्बन्ध एवं सधर्मिता के आधार पर

आश्रय लेकर फल देती है।

दशाफल के लिए तीन घटकों का उल्लेख किया है, जिसमें से इस लेख में प्रथम घटक का ही आकलन किया जा रहा है, क्योंकि वही विशेष है और शेष दोनों अवयव प्रदत फलों में वृद्धि या न्यूनता ही देते हैं :

1. ग्रहों के भाव स्वामी होने से उनके स्थानादिवश विशिष्ट फल मिलते हैं। इसी आधार पर फलों की शुभता और अशुभता का निर्णय भी होता है।

2. ग्रहों के स्वभाववश साधारण फल होते हैं। अर्थात ग्रहों के नैसर्गिक स्वभाव और कारकत्वों से उनके फल प्रभावित होते हैं।

3. फलों की मात्रा कितनी होगी, इसका निर्धारण ग्रहों के बलानुसार किया जाता है जो षड्बल के अन्तर्गत आता है।

अब उन दशाओं को सूचीबद्ध करते हैं जो जातक को योगफल देने में समर्थ हैं :

1. केन्द्र और त्रिकोण का स्वामी एक ही ग्रह हो तो, वह अपनी महादशा की अपनी ही अन्तर्दशा में शुभाशुभ फल नहीं देते, क्योंकि किसी अन्य ग्रह से कोई सम्बन्ध नहीं निर्मित हुआ। ऐसी स्थिति में जब किसी सधर्मी ग्रह (केन्द्रेश या त्रिकोणेश) की दशा आएगी तो योगफल मिलेंगे।

उदाहरण कुंडली 1 में, शनि लग्नेश एवं द्वादशेश होकर शुभ हैं। जातक ने 1999 तक बहुत संघर्ष किया। जैसे ही 1999 में शनि/शनि शुरू हुई, जातक के इर्द–गिर्द सकारात्मक वातावरण निर्मित होने लगा, परन्तु शनि/शनि खत्म होने तक शुभ

उदाहरण कुंडली नं. 1

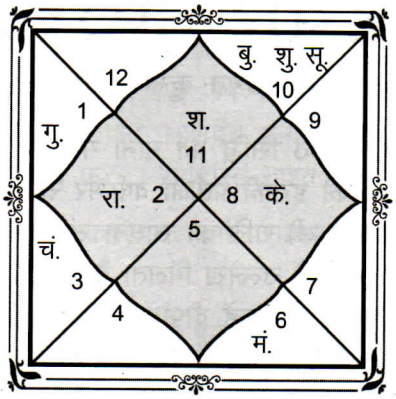

फल प्राप्त नहीं हुए। उसके बाद की अन्तर्दशाओं में शुभफल मिले, परन्तु अधिकतर दशाओं के असंबंधित होने से योगफल प्राप्त न होकर केवल शुभ फल ही मिले।

2. केन्द्र भाव के स्वामी की महादशा में त्रिकोण भाव के स्वामी की अन्तर्दशा हो या त्रिकोण स्वामी की महादशा में केन्द्र स्वामी की अन्तर्दशा हो तो शुभ फलदायी होती है, किन्तु इनका परस्पर सम्बन्धित होना आवश्यक है।

3. शुभ ग्रह की महादशा में सम्बन्धित योगकारक की अन्तर्दशा हो तो योग फल मिल जाते हैं, परन्तु यदि दोनों में से कोई भी दोषी हुआ तो सामान्य शुभ फल ही मिलेंगे। यहाँ भी दोनों का परस्पर सम्बंधित होना आवश्यक है। एक उदाहरण लेते हैं :

उदाहरण कुंडली 2 में, मंगल चतुर्थेश एवं नवमेश होने से योगकारक है। सूर्य लग्नेश होकर शुभ भावेश हैं। गुरु पंचमेश होने से शुभ भावेश हैं, परन्तु अष्टमेश होने से दोषयुक्त भी हैं। सूर्य–मंगल का पूर्ण दृष्टि सम्बन्ध है। सूर्य–गुरु का राशि परिवर्तन सम्बन्ध है। सूर्य/मंगल की दशा में अच्छा योगफल मिलेगा इसमें तो संदेह नहीं है, परन्तु गुरु/सूर्य में

उदाहरण कुंडली नं. 2

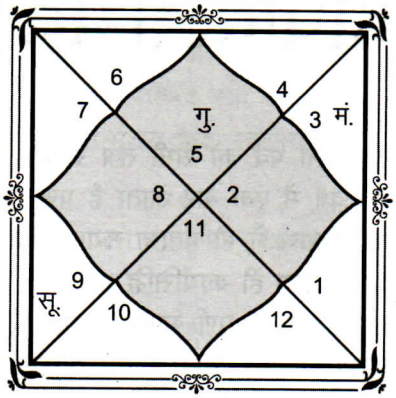

योगफल न मिलकर सामान्य शुभ फल ही मिलेगा, क्योंकि गुरु दोषयुक्त हैं।

4. राहु/केतु का केन्द्र में स्थित होकर त्रिकोणेश से या त्रिकोण में स्थित होकर केन्द्रेश से सम्बन्ध होकर योग बना हो, तो परस्पर दशा–अन्तर्दशा में योगफल होंगे, इसमें कोई संदेह नहीं है, परन्तु यदि राहु–केतु त्रिकोण में स्थित हों, तो असम्बन्धित होने पर भी अपनी अन्तर्दशा में योग फलप्रद होते हैं।

3. : **निष्कर्ष** : निष्कर्ष के तौर पर यह कह सकते हैं कि भाव–भावेश यदि सशक्त हों, नवांश से पुष्टि हो, सम्बन्धित वर्ग भी पुष्टि कर रहा हो और केन्द्रेश–त्रिकोणेश की दशा–अन्तर्दशा आ जाए जिसमें परस्पर सम्बन्ध हो, तो जातक भाव सम्बन्धित सुख–समृद्धि आदि प्राप्त करता है। राहु–केतु की योगकारक स्थितियां और अन्तर्दशा का वर्णन किया गया है।❐

पता : बी– 301, सोम अपार्टमेंट,
सेक्टर–6, प्लॉट–24, द्वारका,
नई दिल्ली–75
मो. 9810162371